North Asian International Research Journal of Multidisciplinary

CIF IMPACT FACTOR:4.465

ISSN: 2454-2326 Vol. 3, Issue-12

किसानों के आर्थिक समस्या के निदानात्मक उपाय

*सुनिल कुमार यादव

*(शोधार्थी) वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग
ल. ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

भूमिका

किसान एवं कृषि देश की अर्थव्यवस्था के मजबूत आधार माने जाते हैं। हो भी क्यों नहीं? देश में लगभग दो तिहाई लोगों को राजगार के स्रोत मुहैया कराने, खाद्य सुरक्षा प्रदान करने तथा बड़े स्तर पर निर्यात बढ़ाने पर अब इनका कोई जवाब नहीं। इसलिए कृषि उत्पादों की बढ़ोतरी के साथ किसानों की खुशहाली, सम्पन्नता एवं उत्पादकता पर देश की सुख–समृद्धि भी काफी निर्भर करती है। देश की आजादी के बाद कृषि की दशा सुधारने के लिए वर्ष 1949 में अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम, वर्ष 1960–61 में भूमि सुधार (चकबन्दी) कार्यक्रम, 1960 के दशक के मध्य में देश में पहली हरित–क्रान्ति आई, जिससे अप्रत्याशित रूप से खाद्यान्न उत्पादन बढ़ा, और किसानों की दशा एवं कृषि में सुधार आया। अब कृषि में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने तथा इसमें और भी सुधार लाने के लिए अगस्त 2007 से 'राष्ट्रीय कृषि विकास योजना', गेहूं, चावल तथा दालों के उत्पादन की वृद्धि के लिए 'राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन' तथा बागवानी वाली फसलों के उत्पादन में बढ़ोतरी के लिए 'राष्ट्रीय बागवानी मिशन' की शुरूआत हुई।

विभिन्न वर्षों के बजट में भी किसानों के हितों का खास ख्याल रखा गया। किन्तु जब से देश में बाजारीकरण बढ़ा है किसानों की दशा सुधरने की बजाय बदतर ही हुई है। पहले तो किसान बैलों के द्वारा खेती करते थे, पर बाजारीकरण के चलते अब उन्हें अधिक पैदावार लेने की जरूरत पड़ती है। इसलिए अब वे महंगे बीज (संकर बीज) लगाते है, डीजल एवं पेट्रोलचालित कृषि यंत्रों (ट्रैक्टर, पम्पिंग सेट, थ्रेशर, कम्बाइन मशीनों आदि) का इस्तेमाल करते हैं, बाजार भाव पर कृषि के साजो–सामान खरीदते हैं पर जब अपनी कृषि उपज को बाजार में बेचने जाते हैं तो लाभकारी न्यूनतम समर्थन मूल्य वाली सरकारी खरीदी व्यवस्था की देरी, ढ़िलाई आदि के चलते वे मंडी के आढ़तियों, साहूकारों, कारोबारियों के जाल में फंस जाते है जो इनके श्रम की कमाई की मलाई उतार लेते हैं। इनपर कर्जे का बोझ बढ़ता है। बैंकों से कर्ज (लगभग 7 से 8.5 प्रतिशत ब्याज पर), यदि मिलता भी है तो वह अक्सर भ्रष्टाचार के रास्ते गुजरता हुआ।

किसानों को तो साहूकारों के कर्जे की दर (अनुमानतः 24 से 30 प्रतिशत) के बराबर का ही आकार पड़ता है। अब चुंकि किसान कृषि उत्पादों के स्वयं भी उपभोक्ता हैं इसलिए वे अक्सर घाटा उठाकर भी खेती करते हैं। मिलता उन्हें उतना ही है जितना यदि जोड़ें तो उनकी उत्पादन में अपनी मजदूरी होती हैं। दूसरे धन्धों का प्रशिक्षण नहीं होने के कारण वह कोई दूसरा काम नहीं कर पाता। किसान अब अपने अस्तित्व को बचाने के लिए भी संघर्ष कर रहें हैं।

कृषि विकास की भी योजनाएं उनके आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त असरदार साबित नहीं हो सकी है। किसान अब भी समाज में सीढ़ी के सबसे नीचे पायदान वाले आदमी हैं तथा सीढ़ी के ऊपर वाले सारे लोगों का बोझ भी उन्हीं के ऊपर रहता है। कुछ किसानों को तो कर्जे माफ हो या न हों उनकी हालत बदहाली में ही गुजरती है। विकसित देशों के किसानों की तुलना में कृषि प्रधान देश होते हुए भी, अपने मुल्क के अधिकांश किसान आर्थिक रूप से समृद्ध एवं खुशहाल नहीं हैं। आर्थिक रूप से किसानों की माली हालत बैंक या सरकारी दफ्तरों के निचे स्तर के कर्मचारियों, लिपिकों, बाबुओं आदि की भी तुलना में कम ही है। वर्ष 1993–94 की कीमतों के आधार पर वर्ष 2001 में देश में प्रति व्यक्ति आमदनी 10,754 रूपये वार्षिक तथा 896 रूपये मासिक पाई गयी है। इसके परिप्रेक्ष्य में कृषि पर आश्रित छोटी जोत वाले औसत कृषक परिवारों की वार्षिक आय 25,380 रूपये की तथा लगभग 2,115 रूपये मासिक की आंकी गई है। देश में वर्ष 2006–07 में प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति जी.डी.पी. की मात्रा भी 36,771 रूपये की तथा मासिक 3,064 रूपये की थी। अब इससे भी किसानों की आर्थिक बदहाली का कुछ अंदाजा लगाया जा सकता है। कभी उत्तम कही जाने वाली खेती की माली हालत, कभी अधम कही जाने वाली चाकरी (नौकरी) से भी नीचे चली गई है। इसलिए किसानों का खेती से मोह भंग हो रहा है और यदि दूसरा कोई कारगर विकल्प मिले तो देश के लगभग 40 प्रतिशत किसान खेती को अलविदा ही कह देंगे, 27 प्रतिशत इसे लाभकारी नहीं मान रहे तथा 8 प्रतिशत का कहना है कि खेती का धन्धा बड़ा जोखिम भरा लगता है। आने वाले पाँच वर्षों में किसानों को यदि बदहाली से बचाना है तो लगभग एक करोड़ किसानों को कृषि धन्धे से निकालकर उन्हें दूसरे आर्थिक रूप से लाभकारी धन्धे से जोड़ना होगा **(राय,2010)।**

दूसरी हरित क्रांति की आवश्यकता

जलवायु परिवर्तन से कृषि प्रभावित हो रही है जिससे नये माहौल के अनुकूल फसलों के नयी किस्मों के विकास, बुआई के समय में परिवर्तन आदि को अपनाने की आवश्यकता है। जलवायु में ग्रीन हाउस गैस के प्रभाव को कृषि पद्धति बदलकर कम करने की पहल करनी होगी। भारतीय कृषि को कार्बन ट्रेडिंग का लाभ लेना होगा। कृषि विविधीकरण को भी यही दिशा देनी होगी । हमारा किसाना मेहनती है

उसे सही मार्गदर्शन एवं पर्याप्त सुविधाएं देनी होगी जिससे देश की प्रगति में किसान की भागीदारी भी उतनी हो सके जितनी की उद्योग जगत की है।

विगत कुछ वर्ष पहले (2012–13) में खाद्यान का उत्पादन 255.36 मिलियन टन हुआ था। भविष्य में खाद्यान्न की बढ़ती मांग को देखते हुए नई हरित क्रांति की आवश्यकता है। 2020–21 तक भारत को 28.1 करोड़ टन अनाज की जरूरत होगी और इसके लिए भारत को कृषि क्षेत्र में उत्पादन को दो फीसदी प्रतिवर्ष के हिसाब से बढ़ाना होगा। अतः एसी जीन क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए सरकार व निजी क्षेत्र दोनो को शोध एवं विकास में मिलकर काम करना होगा और बीजों की नई किस्मों व तकनिकों का इस्तेमाल करना होगा। उत्पादन में सुधार हेतु निजी क्षेत्रों की भूमिका जरूरी है और नीति में इसके प्रासंगिकता को महत्व देना होगा। बागवानी, डेयरी, मुर्गीपालन, मछलीपालन आदि जैसे क्षेत्रों में इसकी बहुत अहमियत है।

आज भारतीय किसान से ज्यादा परावलंबी दूसरा कोई नही है। वह जमीन, पानी, बीज, खाद से लेकर बिजली, कीटनाशक, रासायनिक दवाएं, परिवहन तक के लिए दूसरों का मोहताज है, बाजार और इसके उत्पादन के भाव के बारे में तो उसकी स्थिति और भी दयनीय है। बाजार और सरकार का आज जैसा गठबंधन पहले कभी नही था। आज वह किसान की आंखें भी बंद कर रहा है और नाक भी। फलतः किसान निशाने पर है क्योंकि वैश्विक बाजार उसे अपनी मुट्ठी में करने पर तुला हुआ है दूसरी हरित क्रांति का सीधा मतलब खेती–किसानी को बाजार के दानव से बचाना, उसे जीवन और जीविका के बुनियादी अधिकार से जोड़ना और उसे संवैधानिक संरक्षण देना है।

उपयुक्त ऋण व्यवस्था की उपलब्धता

कृषि कार्य के लिए उपयुक्त वित्त व्यवस्था की कमी कृषि क्षेत्र के विकास में एक बड़ी बाधा है। 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना का आरंभ किया गया था ताकि किसानों की अल्पकालीन ऋण जरूरतों को पूरा किया जा सके। कृषि क्षेत्र में ऋण प्रवाह की धारा को तीव्र करने के उद्देश्य से ही सरकार ने 1982 में नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चर एंड रुरल डेवलपमेंट (नाबार्ड) की स्थापना की थी। 1975 में ग्रामीण बैंकों की स्थापना के पीछे भी ग्रामीण कृषकों को बेहतर वित्तीय व ऋण सुविधा प्रदान करने का लक्ष्य था। परन्तु इन सबके बावजूद कृषकों क ीसम्पूर्ण ऋण आवश्यकता की वांछित पूर्ति नहीं हो पायी है। देश में संस्थागत ऋण प्रवाह को गति देने के लिए ही भारतीय रिजर्व बैंक और भारत सरकार ने कई घोषणाएं व दिशा–निर्देश जारी किए हैं। रिजर्व बैंक द्वारा जारी एक रिपोर्ट में यह माना गया है कि 2000 से 2010 के बीच कृषि ऋण का हिस्सा 755 प्रतिशत बढ़कर 3,90,000 करोड़ रुपये हो गया है। नाबार्ड के द्वारा गठित ऐ अनुसंधान आयोग का मानना हेकि देश में उप्रैल 2009 से जनवरी 2010 तक कृषि क्षत्र ो

आवंटित ऋण 3 लाख करोड़ पर स्थिर रहा और तेजी से बढ़कर मार्च 2010 तक 8 लाख करोड़ हो गया वित्त वर्ष 2014–15 के आम बजट में कृषि क्षेत्र की बेहतरी के लिए किसानों को सस्ता कर्ज उपलब्ध करने के लिए 8 लाख करोड़ रूपये का आबंटन किया गया। इन आंकड़ों से यही प्रतीत होता है कि किसानों के लिए लागू की जा रही ये योजनाएं बेहतर है परन्तु वास्तविकता इसके विपरीत हैं आज भी अधिकांश किसान गैर–संस्थागत स्रोंतों से भीरी ब्याज दरों पर ऋण लेते हैं। कृषि क्षेत्र में ऋण के मुद्दे पर नाबार्ड के पूर्व अध्यक्ष यू.सी.सारंगी की अध्यक्षता वाले कार्यदल ने अपनी रिपोर्ट में इस तथ्य को उजागर किया है कि छोटे व सीमान्त किसान गैर–संस्थागत स्रोंतों से भारी मात्रा में उच्च ब्याज दरों पर ऋण प्राप्त कर रहे हैं। इस दल ने बताया कि देश के करीब 36 प्रतिशत किसान 20–25 प्रतिशत ब्याज दरों पर, 38 प्रतिशत किसान 30 प्रतिशत ब्याज दरों पर साहूकारों या अनय गैर–संस्थागत स्रोतों से ऋण प्राप्त कर रहे हैं। रिजर्ब बैंक की हालिया रिपोर्अ इस तथ्य को और मजबूत करती है जिसमें यह बताया गया हैकि देश में छोटे व सीमान्त किसान जिनके जोत में 2.5 हेक्टेयर भूमि है कुल कृषकों का 83 प्रतिशत है तथा कुल जोत का लगभग 43. 5 प्रतिशत इनके पास है जबकि उनको प्राप्त ऋण मात्र 24 प्रतिशत ही है। इसके अलावा संस्थागत क्षेत्रों से ऋण प्राप्ति में भी किसानों को कई तरह क ीअनियमितताओं का सामना करना पड़ता है। कई जगह तो उनसे अवैध शुल्क की मांग तक की जाती हैं देश के ग्रामीण क्षेत्रों में तो किसान क्रेडिट कार्ड के लिए दलालों का एक वर्ग तक पैदा हो गया है। एसी स्थिति में किसानों की दुर्दशा ठीक करने का प्रयास किया तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक बेहतर ऋण प्रवाह की पारदर्शी प्रणाली नहीं बनती है (कुमार, 2014)।

संबद्ध कृषि व्यवसाय का संवर्द्धन

वैसे जब से सभ्यता शुरू हुई है तब से कृषि के साथ संबद्ध कृषि क्रियाकलाप हमारी आजीविका का अभिन्न अंग रहे हैं। ये न केवल खाद्य और शक्ति के रूप में योगदान देते रहे है बल्कि इससे परितंत्रीय संतुलन कायम रखने में भी मदद मिलती रही है। भौगोलिक विविधता और अनुकूल जलवायु के चलते संबद्ध कृषि क्षेत्र की देश के सामाजिक–आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हमारी पारम्परिक और सांस्कृतिक प्रयासों का भी इसके विकास में अहम योगदान रहा है। एनएसएसओ के 68वें दौर के आंकड़ें बताते हैं कि संबद्ध कृषि व्यवसायों में 1कड़ोर 64 लाख व्यक्ति कार्यशील हैं यानी यह क्षेत्र देश की कार्यशील आबादी के 3.5 प्रतिशत को रोजगार मुहैया करा रहा है।

चिकन, मीट और अण्डों की उपलब्धता के लिए व्यावसायिक स्तर पर मुर्गी और बत्तख पालन को कुक्कुट पालन कहा जाता है। भारत में कुक्कुट उत्पादन में पिछले चार दशकों में अत्यधिक वृद्धि हुई है और यह अवैज्ञानिक कृषि पद्धति के स्थान पर उन्नत प्राद्योगिकी के साथ वाणिज्यिक उत्पादन प्रणाली के रूप

में परिवर्तित हो गया है। कुक्कुट पालन, पशुपालन के अधिन व्यवसाय है। यह ऐसा व्यवसाय है जिसे सहायक उद्यम के रूप में विकसित कर लाखों–करोड़ों का लाभांश कमाया जा सकता है और देश की बेरोजगार अबादी के एक हिस्से को रोजगार का माध्यम मुहैया कराया जा सकता है। देश की नामचीन कंपनी सुगुना पोल्ट्री इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है जो मामूली आय से मुर्गीपालन व्यवसाय शुरू कर आज 4200 करोड़ रूपये की कम्पनी बन गई है और देश के 18 हजार किसानों को आय के बेहतर अवसर भी दे रही है। पिछले तीन दशकों में कुक्कुट व्यवसाय पूर्ण उद्योग के रूप में विकसित हो चुका है और इसकी वार्षिक वृद्धि दर भी कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र की औसत वृद्धि दर से अधिक रही है। वर्ष 1985–86 में कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र की वार्षिक वृद्धि 0.7 प्रतिशत जबकी कुक्कुट पालन में यह 12.06 प्रतिशत थी। वर्ष 2000–01 में यह क्रमशः 0.3 प्रतिशत और 6.95 प्रतिशत तथा 2014–15 में यह 1.3 प्रतिशत और 4.99 प्रतिशत रही है। यह बेरोजगारी घटाने के साथ–साथ देश की पोष्टिकता बढ़ाने का भी उम्दा विकल्प है।

बहुफसली खेती से बदलेगी किसानों की तकदीर

खेती में नई तकनीक अपनाकर कम लागत में अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। बस जरूरत है थोड़ी सी सावधानी बरतने की और लगन के साथ तकनीक सीखने की कृषि वैज्ञानिकों की ओर से बतायी जानेवाली नई तकनीक के जरिये बहुफसली चक्र को अपनाया जा सकता है। इससे न केवल खेती में मुनाफा होगा बल्कि आप दूसरे किसानों के चहेते भी बन सकते है। बहुफसली तकनीक से खेती करके किसान अपनी तकदीर बदल सकते हैं। समृद्ध किसान बनने के लिए सैंकड़ों एकड़ खेत की जरूरत नहीं है। बस जरूरत है तो कड़ी मेहनत और नवीनतम तकनीक की। नवीनतम तकनीक से खेती की जाए तो छोटे किसान भी समृद्ध हो सकते हैं।

बेहतर प्रसार गतिविधियों का संचालन

बेहतर प्रसार गतिविधियों के संचालन का कृषि क्षेत्र एवं कृषकों के आर्थिक हैसियत पर सकारात्मक प्रभाव सामने आता है। राज्य में प्रसार के कर्मियों की सफल टीम का उपलब्ध प्रौद्योगिकी को खेत के स्तर तक पहुंचने के मामले में दीर्घकालिक प्रभाव पड़ेगा। यह टीम बीज प्रबंधन, मिट्टी की जरूरत के उनुरूप रासायनिक उर्वरकों के उचित मिश्रण का उपयोग, नया फसल पैटर्न अपनाने और उच्च उत्पादकता वाले बीजों के व्यापक उपयोग के लिए क्षेत्र स्तर पर उत्प्रेरक का मांग करेगी। प्रखंड स्तर के नीचे विषयवस्तु विशेषज्ञ (सब्जेक्ट मैटर स्पेशलिस्ट) और किसान सलाहकार की सेवा का प्रावधान किए जाने से हाल के वर्षों में बिहार में अब तक निष्क्रिय रही प्रसार सेवाओं कामकाज में जबर्दस्त वृद्धि हुई है।

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर में बिहार से जुड़े 20 कृषि विज्ञान केन्द्रों और महाविद्यालयों के सहयोग से 28 अप्रैल, 2012 को 'किसान चौपाल' शुरू किया। किसान चौपाल की मुख्य विशेषता किसानों से बेहतर सम्पर्क सुविधा स्थापित करना तथा कृषि समस्याओं का तुरंत निष्पादन करना है। यही नही विभिन्न विषयों के वैज्ञानिकों के एक समूह द्वारा जरूरत एवं जलवायु के मुताबिक जानकारी जैसे बगीचा प्रबंधन, सब्जी की खेती, खाद्य प्रसंस्करण, पशुपालन, मत्स्य पालन इत्यादि की जानकारी तथा प्रशिक्षण मुहैया कराया जाता है। गत वर्षों में यह मंच कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों में विभिन्न केन्द्रीय और राज्य प्रायोजित योजनाओं के बारे में किसानों के बीच जागरूकता पैदा करने का एक सफल माध्यम साबित हुआ है। ऐसे प्रयासों को गति देने की जरूरत है।

बेहतर कृषि विपणन व्यवस्था

कृषि विपणन से आशय उन सभी क्रियाओं से जिनका सम्बन्ध कृषि उत्पादन को किसान के यहां से अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचाना है अर्थात कृषि विपणन में कृषि उपजों को एकत्रित करना, उनका श्रेणीयन एवं प्रमाणीकरण, भण्डारण, मंडी तक पहुंचाना, उनकी बिक्री करना और इन सबके लिए आवश्यक वित्त व्यवस्था करना आदि शामिल है। वर्तमान में कृषि विपणन व्यवस्था में कई दोष व्याप्त हैं। आज भी किसान अपनी उपज का बड़ा भाग गांव में ही साहूकारों, माहाजनों, बनियों, घूमते–फिरते व्यापारियों व हाटों में ही बेच लेते हैं क्योकि ये किसान या तो साहूकारों अथवा महाजनों से पूर्व में ही ऋण लिए होते है या धन की आवश्यकता में खड़ी फसल का सौदा कर लेते हैं। किसानों के पास अभी भी परिवहन साधनों का काफी अभाव है। साथ ही मंडियों में व्याप्त कुरीतियों से भी वे बचना चाहते हैं। इन मंडियों में दलाल एवं आढ़ती धोखेबाजी से किसानों को नुकसान पहुंचाते हैं। जैसे उपज का एक अच्छा भाग नमूने अथवा बानगी के रूप में निकाल लेते हैं, बाट एवं तराजू की गड़बड़ी, इशारों से मूल्य निर्धारण करना, मूल्य तय करते समय किसान को विश्वास में न लेना, आड़त, तुलाई एवं पल्लेदारी के अलावा गौशाला, पशुशाला, धर्मशाला, रामलीला, रासलीला, प्याऊ एवं बोराबंदी के नाम पर अनुचित कटौती करते है। मंडी में यदि कोई विवाद हो जाय तो आढ़ती क्रेता का ही पक्ष लेते है, वहां किसानों की कोई परवाह नहीं की जाती।

ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उपज को अच्छे और पक्के भंडारगृहों में रखने की सुविधाओं का आज भी अभाव है। अतः किसानों के अपने निजी भंडार जैसे खत्ती, कोठे, मिट्टी व बांस के बने बर्तन आदि में जहां किटाणुओं, सीलन, घुन, चूहे, दीमक व अन्य कीड़े–मकोड़े से सुरक्षा नही हो पाती, वहां किसान फसलों के अच्छा भाव आने का इंतजार न कर, उपज को शीध्र बेचने के लिए बाध्य हो जाता है। किसानों को मूल्य संबंधी सूचनाएं समय पर उपलब्ध नहीं हो पाती है क्योंकि किसानों की व्यस्तता के कारण एवं अशिक्षित

होने के कारण उन्हें सामाचार–पत्र, रेडियों अथवा टी.वी. पर मूल्य की समुचित जानकारी नहीं हो पाती और वे महाजन अथवा व्यापारी द्वारा बताए गए मूल्यों पर ही विश्वास कर लेते हैं।

वर्तमान कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार की नितांत आवश्यकता है। सरकार को चाहिए कि नियमित मंडियों की और अधिक स्थापना करें, जिसपर सरकार का नियंत्रण हो। मंडी स्थल पर किसानों के रूकने तथा ठहरने व अपनी उपज को रखने की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। अधिकांश कृषि वस्तुओं के लिए प्रमाप निर्धारित किए जाने चाहिए। कृषि विपणन व्यवस्था में मध्यस्थों की संख्या को कम कीया जाए तथा उन्हें शोषण से बचाने के लिए अधिकाधिक सहकारी विपणन समितियां बनायी जानी चाहिए। कृषि उत्पादों के विपणन में सुधार हेतु गांवों की सड़कों को शहरों एवं मंडियों से जोड़ा जाना चाहिए ताकि किसान अपना उत्पाद शहर की मंडियों में बेचने के लिए ला सके। ग्रामीण क्षत्रों में किसानों के लिए, कृषि पदार्थों के स्थानीय मूल्य व संबंधित बातों की जानकारी, मुख्य मंडियों के भाव प्रतिदिन रेडियो, दैनिक समाचार–पत्रों एवं टेलीविजन के माध्यम से प्रचारित एवं प्रसारित किए जाने चाहिए। प्रमाणित बाट व माप–तौल काम लाए जाए, जिससे किसानों को धोखादारी से बचाया जा सके क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी पुराने बाट प्रयोग में लाते हुए देखा जा सकता है जिनपर सख्त कारवाई की जानी चाहिए।

निष्कर्ष

तमाम ऐसे उद्योग हैं जो सीधे–सीधे कृषि पर आधारित हैं और उन्हें कच्चे माल की आपूर्ति कृषि क्षेत्र से ही होती है। जैसे वनस्पति एवं बागान उद्योग, चीनी उद्योग, डेयरी उद्योग आदि ऐसे उद्योग हैं जिनका सीधा संबंध कृषि से है। इसी प्रकार अनेक उद्याग ऐसे हैं जिनकी निर्भरता परोक्ष रूप से कृषि पर बनी हुई है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार क्षेत्र में भी भारतीय कृषि की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। आज भारत विभिन्न देशों को प्रचुर मात्रा में मसाले, ऑयल, बीज, चाय, तम्बाकू, मेवे आदि निर्यात करता है जिसका आधार कृषि ही है। हम कृषि से बनी बस्तुओं के भी बड़े निर्यातक हैं। अच्छे स्तर एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पादों की वजह से अंतराष्ट्रीय–स्तर पर भारत की छवि अच्छी बनी हुई है। निर्यात से हमें विदेशी मुद्रा भी मिलती है जिससे हमारी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है।

कृषि केन्द्र एवं राज्य सरकारों के राजस्व का भी प्रमुख स्रोत है। मालगुजारी, कृषि आयकर, सिंचाई कर तथा कृषि सम्पति कर के रूप में राज्य सरकारों को कृषि क्षेत्र से अच्छी आय होती है। देश में परिवहन व्यवस्था को भी विकसित करने में कृषि क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कृषि को ध्यान में रखकर हमने इनका एक मजबूत तंत्र विकसित किया जिससे कृषि व्यापार को प्रोत्साहन मिला और हमारी अर्थव्यवस्था को भी उच्च आयाम मिले हैं। पिछले 50–60 वर्षों में कृषि, पशुपालन, दुग्ध, फल, सब्जियां और विभिन्न प्रकार

की रेशेदार फसलों के उत्पादन में भारत ने आश्चर्यजनक प्रगति की है और सब्जी तथा खाद्यान्नों में विशेषकर गेहूं, धान उत्पादन में तो यह विश्व में दूसरे स्थान पर पहुंच गया है। इसी प्रकार दूग्ध उत्पादन में विश्व स्तर पर सर्वाधिक उत्पादन कर कीर्तिमान स्थापित करने का श्रेय भी हमारे देश को प्राप्त है।

भारत में कृषि पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर उद्योगों में सूती और पटसन वस्त्र उधोंग, चीनी वनस्पति तथा बागान उद्योग शामिल है तो हथकरघा, बुनाई, तेल निकालना, चावल कूटना अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर हैं। इसी प्रकार संपूर्ण खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों का विकास भी कृषि पर निर्भर है। साथ ही वनस्पति एवं बिस्कुट उधोग, फल व सब्जी प्रशोधन उद्योग, अनाज व दाल उद्योग, पशुपालन, मछली पालन, दुग्ध उद्योग, कृषि अधारित कुछ उन्य उद्योग हैं। आज की खेती अधिकांशतः इको–टेक्नोलॉजी पर निर्भर है अर्थात् पारम्परिक ज्ञान और बेहतर प्रौद्योगिकी दोनों ही के प्रयोग से खेती के निरंतर विकास के साथ–साथ खाद्य सुरक्षा सुनिश्चत की जा सकती है। आज जरूरत है कि शिक्षित युवा गांव से किनारा न करके कृषि से सम्बद्ध उद्योगों से न केवल जुड़े बल्कि उनमें बढ़–चढ़कर हिस्सा ले। शिक्षित युवा नई तकनीकों का इस्तेमाल कर देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान कर सकते है।

वैसे तो सरकार ने कृषि अधारित उद्योगों के विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं फिर भी ये उद्योग कुछ समस्याओं की वजह से वांछित प्रगति नहीं कर पा रहे हैं। इनमें कच्चे माल, तित्त की समस्या, उत्पाद, तकनीक, विपणन की समस्या, बढ़े उद्योगों से प्रतिस्पर्धा एवं सरकारी संस्थाओं के नौकरशाहीपूर्ण रवैये के चलते इन उद्योगों का उतना विकास नहीं हो पा रहा जितना कि अपेक्षित था। इन समस्याओं से निपटने के लिए सरकार को प्र्याप्त कदम उठाने होंगे जिससे निकट भविष्य में ये उद्योग अर्थव्यवस्था में अपना उचित स्थान ग्रहण कर देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम हो सके। कृषि आधारित उद्योगों को प्रोत्साहित कर खेती किसानी में लगे लोगों की दशा सुधारी जा सकती है।

संदर्भः

1. राय, भूपेन्द्र (2010), देश के विकास से जुड़ा है किसानों का हित, कुरूक्षेत्र, वर्ष 56, अंक 3, जनवरी, पृष्ठ 26–29
2. द्विवेदी, शिवानंद (2014), व्यवसायपरक हो भारत में कृषि, योजना, वर्ष 58, अंक 6, जून, पृष्ठ 53
3. सिंह , आशुतोष कुमार (2015), बदलते गांव, उभरता भारत, कुरूक्षेत्र, वर्ष 62, अंक 2, दिसम्बर, पृष्ठ 6–7
4. गिल, ओ.पी. (2014), आवश्यकता दूसरी हरित क्रांति की, योजना, वर्ष 58, अंक 6, जून, पृष्ठ 41–43

5. कुमार, गौरव (2014), कृषि विकास के लिए जरूरी है बेहतर ऋण प्रवंधन, वर्ष 61, अकं 1, नवम्बर, पृष्ठ 4

6. कुमार, सौरभ (2014), भारत में कृषि ऋण की चुनौतियां, कुरूक्षेत्र, वर्ष 61, अंक 1, नवम्बर, पृष्ठ 32

7. मधुसूदन, गजेन्द्र सिंह (2017), सम्बद्ध कृषि व्यवसाय का संवर्द्धन : कुक्कुट पालन, मधुमक्खीपालन और रेशम कीट पालन में असीम संभावनाएं, कुरूक्षेत्र, वर्ष 63, अंक 3, जनवरी, पृष्ठ 36–41

8. श्रीवास्तव, दिव्या (2015), बहुफसली खेती में बदली किसान की तकदीर, कुरूक्षेत्र, वर्ष 61, अंक 6, अप्रैल, पृष्ठ 48–50

9. द्विवेदी, जितेन्द्र (2014), जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव, कुरूक्षेत्र, वर्ष 60, अंक 8, जून, पृष्ठ 40

10. गौतम, नीरज कुमार (2014), जल कृषि : विविध उद्योगों का आधार, कुरूक्षेत्र, वर्ष 60, अंक 7, मई, पृष्ठ 28–33

11. आर्थिक सर्वेक्षण 2014–15, वित्त विभाग, बिहार सरकार, पटना, फरवरी, पृष्ठ 63

12. बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर की वेबसाईट

13. एवं सिंह, वैभव (2014), भारतीय कृषि विपणन व्यवस्था, कुरूक्षेत्र, वर्ष 61, अंक 1, नवम्बर, पृष्ठ 34–36

14. सिंह, हरवीर (2017), कृषि व्यापार नीति में बदलाव से ही खाद्य सुरक्षा को मिलेगी मजबूती, कुरूक्षेत्र, वर्ष 63, अंक 4, फरवरी, पृष्ठ 32–33

15. ग्रामीण भारत में कृषि आधारित उद्योग पर केन्द्रित अंक का सम्पादकीय, कुरूक्षेत्र, वर्ष 60, अंक 7, मई 2014, पृष्ठ 4

16. द्विवेदी, जितेन्द्र (2011), जैविक खेती : खाद्य सुरक्षा की सुनिश्चितता, कुरूक्षेत्र, वर्ष 57, अंक 5, मार्च, पृष्ठ 8

17. हिन्दुस्तान, दैनिक समाचारपत्र, मुजफ्फरपुर संस्करण, 4 मई, 2016, पृष्ठ 11

18. दहायत, तुलसीराम एवं टेकाम, केशव (2014), जैविक कृषि तकनीक की संभावनाएं, कुरूक्षेत्र, वर्ष 60, अंक 8, जून, पृष्ठ 11